कश्मीर के सूफी संत 'नुंद ऋषि'

डॉ० राज नारायण शुक्ला
एस० डी० कॉलेज गाजियाबाद

सारांश

कश्मीर बहुत प्राचीन काल से ही भारत का एक महत्वपूर्ण अंग रहा है। ऐसा धार्मिक, सांस्कृतिक व राजनैतिक तीनों रूपों में हुआ। दार्शनिक रूप से जो विचारधाराएँ पूरे भारत में फैल रही थी, उनका एक महत्वपूर्ण केन्द्र कश्मीर भी था। वहॉ शैवदर्शन, बौद्ध, सिद्ध, मीमांसक, नैयायिक, तांत्रिक तथा सूफी दर्षन का प्रभाव रहा। मुस्लिम आधिपत्य से वहॉ सूफी दर्शन का प्रभाव फैलने में पर्याप्त मदद हुई। हालांकि मुस्लिम आधिपत्य के कारण कश्मीर में कट्टरपंथी मौलानाओं ने जबरन धर्म परिवर्तन के लिए हिन्दुओं पर अत्याचार का प्रयास पूरी तरह जारी रखा। पर उन्हीं ने बीच सूफी दर्शन ने इस्लाम से पूरी तरह प्रभावित होने के बाद भी मिली–जुली संस्कृति को लेकर इस्लाम का प्रचार बनाए रखा। वह प्रेम और भारतीय परम्परा को बनाए रखने में सफल रहें। नुन्द ऋषि इन्हीं के एक शीर्ष प्रतिनिधि के रूप में हमारे सामने आए। शेख नुरूद्दीन वली जिन्हें कश्मीरी ऋषि परम्परा के उत्तराधिकारी के रूप में नुंद–ऋषि भी कहा गया। शेख नुस्द्दीन संतकवि थे और एक इस्लामी प्रचारक भी। उनकी काव्य प्रतिभा का प्रकाश केवल धार्मिक, नैतिक उपदेश के लिए ही सीमित नहीं रहा। अपितु वे सामाजिक सरोकारों से भी रूबरू हुए। उन्होंने सामाजिक जीवन की विषमताओं को समझाऔर धार्मिक वाह्य आडम्बरों पर खुलकर प्रहार किया। भारतीय परम्परा के अनुसार उन्होंने अपने आपको ऋषि कहा और इस्लाम की कट्टरवादी धारा से अपने को हमेशा दूर रखा।

महत्वपूर्ण शब्द संकेत – *सांस्कृतिक, मानवीय, आडम्बर, संत, ऋषि, लोकप्रिय, लल्लेश्वरी, धर्म*

शोध पत्र का संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार है:

डॉ० राज नारायण शुक्ला, "कश्मीर के सूफी संत 'नुंद ऋषि' , शोध मंथन जून 2017, पेज सं0 96–100
http://anubooks.com/?page_id=2030
Artcile No.17(SM424)

प्रस्तावना

भारत वर्ष में ज्ञान दर्षन की एक सुदीर्घ परंपरा रही है। शारदा देश कश्मीर में तो भारतीय ज्ञान परंपरा का ऐसा प्रवाह चला कि वहां एक सर्वज्ञ पीठ की स्थापना हो गयी। जहाँ सम्पूर्ण भारत वर्ष की सभी ज्ञान विद्याओं, साधना, परम्पराओं के सर्वोपरि समादृत आचार्यों को ही आसन मिलता था। कश्मीर में किसी एक ही विचार–परंपरा का प्रवाह नहीं रहा, अपितु एक तरह से वह दार्शिनिक प्रयोगशाला के रूप में देखा गया। जहाँ कभी एक साथ तो कभी अलग–अलग विभिन्न दार्शिनिक विचारधाराओं का प्रभाव रहा। यहाँ यद्यपि सर्वाधिक प्रभाव शैव दर्शन {त्रिक दर्शन} का रहा परन्तु यह भूमि बौद्ध, सिद्ध, मीमांसक, नैयायिक, तांत्रिक और सूफी आदि परम्पराओं की संगम स्थली के रूप में भी विकसित हुई। मुस्लिम अधिपत्य से पहले कश्मीर में शैव , वेदांत और भागवत धर्मों का मिला जुला प्रभाव था, जिसमे यत्र – तत्र बौद्ध दर्शन की भी झलक मिलती रही। नागार्जुन के शून्यवाद का प्रभाव कश्मीर में रहा। लल्लेश्वरी और नुन्द ऋषि दोनों ने शून्य की बात की। नुन्द ऋषि तो शिव और शून्य के मिलन की बात भी करते हैं।

लल्लेश्वरी के बाद कश्मीर के सांस्कृतिक प्रवाह ने जिन आदर्शों, मूल्यों से वहां के जन जीवन को प्रभावित किया, उन्हें स्थापित करने वाले मनीषियों में सुप्रसिद्ध संत और कवि शेख नूरुद्दीन वली का नाम कश्मीरी जनमानस में अत्यंत श्रद्धा से लिया जाता है। जिस प्रकार उत्तर भारत में भक्ति आंदोलनों ने महान संत कवियों की एक परंपरा विकसित की। जिन्होंने तत्कालीन समय की आवश्यकतानुसार निराशा के गहन अंधकार को चीरकर मानवीय चेतना की अखंडता को उसकी उच्चतम आधारभूमि पर प्रतिष्ठित किया है, ऐसे कबीर जायसी, नानक, सूर, तुलसी, बुल्लेशाह आदि कवियों की वाणी कश्मीर में शेख नूरुद्दीन वली की वाणी से एकाकार होती हुई एक ही दिशा में प्रवाहमान होती है तथा सम्पूर्ण भारत में विस्तार पाती है।

शेख नूरुद्दीन की काव्य प्रतिभा का प्रकाश केवल धार्मिक, नैतिक उपदेश के लिए ही सीमित नही रहा। अपितु वह सामाजिक सरोकारों से भी रूबरू होता है। वह ईश्वर के प्रति अपनी अटूट आस्था अनन्य भक्ति को तो समर्पित है ही परन्तु उन्होंने सामाजिक जीवन में काफी विषमताओं और विडम्बनाओं को भी अनुभव किया और एक व्यापक आधार प्रदान करके अपनी कवित्व शक्ति से सामाजिक और धार्मिक वाह्य आडम्बरों पर खुलकर प्रहार किया।

शेख नूरुद्दीन वली का समय 1376 ई0 से 1438 ई0 तक रहा। यह समय कश्मीर में इस्लाम के उभार का समय था। यद्यपि शेख नूरुद्दीन एक उच्चकोटि के मुस्लिम संत थे और उन्होंने कश्मीर में अपने पूरे प्रभाव और मनोयोग से इस्लाम धर्म का प्रचार किया, उसे प्रतिष्ठित किया। पर अपनी सूफी परम्परा और उदार व्यक्तित्व के कारण उस समय के अन्य इस्लामिक प्रचारकों, सादात आदि से उनका मतभेद भी हुआ। वह अपने प्रचार में कट्टरता नहीं ला पा रहे थे। उनके कवित्व में तो शैव, शाक्त, बौद्ध, सहजमार्ग, हठयोग, सूफी आदि सभी धाराये मिल रहीं थीं।

बहुत सी बातों में वे अपने समकालीन अन्य इस्लामी प्रचारको से भिन्न थे, उन्होंने मांस का विरोध किया, प्राणायाम को अपनी साधना का मार्ग बनाया, परिवार त्याग की वकालत की। इन सबके बाद भी या इन सब बातों के कारण ही वह सर्वाधिक लोकप्रिय हुए।

शेख नूरुद्दीन के पूर्वज कश्मीर की एक छोटी सुंदर घाटी कितवाड के राजा थे। आंतरिक विरोध के कारण उग्रतेज तथा उनका एक भाई कश्मीर के कुलगाँव में आकर रहने लगे। उग्रतेज को वहां के राजा रामदेव द्वारा रौप्यवन की जागीर दे दी गयी पर वहां हुए एक हमले में उग्रतेज मारा गया। उग्रतेज के दो बेटे हुए उनमे एक जनकातेज था जिसके मरने पर उसका बेटा शंभर राज दरबारी बना शंभर का ही इकलौता पुत्र सलत मुस्लिम प्रचारक सैय्यद समनानी के संपर्क में आकर मुसलमान हो गया। उसका मुस्लिम नाम शेख सालारदीन पड़ा। उसका विवाह एक विधवा सदर से हुआ दोनों कयमूह गाँव में आकर रहने लगे। यहाँ पर १३७६ ई0 में शेख नूरुद्दीन का जन्म हुआ।

नूरुद्दीन बचपन से ही गंभीर , चिंतनशील तथा ईश्वर के प्रति समर्पित रहे। काव्य प्रतिभा का प्रस्फुटन भी इनमें बाल्यकाल से ही हो गया था। प्रारंभ सूक्तियां कहने से हुआ। किसी अवसर पर कोई नैतिक उक्ति, उपदेशात्मक कविता या सामाजिक आडम्बरों के विरूद्ध व्यंग्य का भाव इनमें इसी समय से आ चुका था। उनका विवाह जयद्यद के साथ हुआ जिनसे उनके दो बच्चे जून और हैदर हुए। परन्तु दोनों ही बच्चे मर गये। ईश्वर ने ही उन्हें माया मोह से विरक्त कर दिया। पत्नी भी उन्हें अपने अनुराग से रोक नहीं सकी। वे अपने गाँव कयमूह में ही एक गुफा में कठोर साधना में रत हो गये। यह साधना बारह वर्ष तक अनवरत चली। पाथर से कूटकर खाना, छेद किये बर्तन में दूध पीना और फिर उनका भी त्याग यही दिनचर्या उनकी बारह वर्ष तक रही। साधना पूर्ण होने पर उन्होंने कश्मीर का भ्रमण प्रारंभ किया। वे स्थान स्थान पर घूमते रहे लोगों को संबोधित करते रहे। उनके शिष्य बनते चले गए। हिन्दू और मुस्लिम धर्मों की मूलभूत एकता को लेकर चलने के कारण हिन्दू भी उनके प्रति श्रद्धा रखने लगे और उन्हें सहजानंद नाम से संबोधित करने लगे। जो भी हो वह पूरी श्रद्धा से इस्लाम का प्रचार करते रहे। कई गैर मुस्लिम साधु इनके संपर्क में आकर मुसलमान हो गये। इनमें जोगी ऋषि , ऋषि जेनन्दर, बुमशाद {भौम साधु} ऋषि सिंह आदि प्रमुख है। १४३८ ई0 मे रौप्यवन में इनकी मृत्यु हो गयी। उनके शव को चरारे शरीफ ले जाया गया। तत्कालीन बादशाह जैन उल आबदीन इनके जनाजे में शरीक हुए थे।

संत कवि नूरुद्दीन भक्ति की उसी भावभूमि पर खड़े मिलते हैं जहाँ संत कबीर और जायसी खड़े हैं, भारत की सांस्कृतिक चेतना की मूलभूत एकता के ये स्वर अनायास तो नहीं हैं। अपितु ये भारतीय आत्मा के स्वाभाविक स्वर है। जो अपने समय में सारे देश में फैल रहे थे। और इसका साधन संतो की काव्य चेतना बनी। परन्तु शेख नूरुद्दीन के व्यक्तित्व में उनकी काव्य चेतना से अधिक प्रभावी रहा उनका आध्यात्मिक रूप। शेख नूरुद्दीन को कश्मीर में अपार प्रतिष्ठा मिली। पर यह प्रतिष्ठा उनके आध्यात्मिक व्यक्तित्व के कारण ज्यादा थी।

नूरुद्दीन के कलाम मौखिक परंपरा से चलते रहे। बाद में इनके शिष्यों ने इन्हें ऋषिनामों और नूरनामों में संगृहीत किया। समय के अधिक अन्तराल के कारण प्रक्षिप्त अंशों की सम्भावना भी है। इनमे उनकी माँ, पत्नी तथा शिष्यों द्वारा जोड़े गए हो सकते है। लल्लेश्वरी के भी अनेक वाख् शेख के साथ जोड़ दिए गए बताये जाते है। हालाँकि दोनों में अंतर को कुछ प्रवृत्तियों के

आधार पर समझा जा सकता है। ऋषिनामों और नूरनामों में उल्लिखित उनके कलामों में उनके विचार और उनकी मूलध्वनि को बचाकर रखने के उद्देश्य से ज्यादा उनके चमत्कारों के महिमा मंडन की ध्वनि ज्यादा सुनायी पड़ती है। उनकी लोकप्रियता के प्रारंभ में ही एक के बाद एक चमत्कार उनसे जुड़ते चले गए। और उनके कवि रूप में आध्यात्मिक और अलौकिक छवि हावी होती चली गयी। उनके अनुयाइयों ने भी शेख के इसी रूप को आगे बढ़ाना जारी रखा। शेख नूरुद्दीन ने धार्मिक बाह्य आडम्बरों का विरोध किया। जबकि उनके कई कलाम तमाम आडम्बरों बाह्य आचारों की प्रतिष्ठा करते हुए लिख गए हैं। इससे उनके प्रक्षिप्त होने की आशंका बढ़ती है। यही स्थिति कबीर के साथ भी हुई। कबीर वाणी में भी ऐसे अनेक पद जोड़े गए जो कर्मकाँडों को बढ़ावा देते हैं। जबकि कबीर जीवन भर इनका विरोध करते रहे। शेख नूरुद्दीन के साथ भी, वज़ू, नमाज, गुसल आदि की महत्ता स्थापित करने वाले कलाम उनके बताये जाते है।

शेख नूरुद्दीन ने अपने आपको भारत की प्राचीन ऋषि परंपरा से जोड़ा। हालांकि कश्मीर की मुस्लिम परंपरा में ऋषि का अर्थ हिन्दू परंपरा से थोडा बदला हुआ है। कश्मीर के आदि पुरुष कश्यप एक ऋषि थे। वहां की ऋषि परंपरा का प्रभाव कश्मीरी जनमानस पर इतना अधिक था कि शेख नूरुद्दीन ने भी अपने आपको ऋषि कहलवाने में गौरव अनुभव किया। ऋषि परंपरा में वे 'नुंद ऋषि' कहलाये। नुंद ऋषि ने इस परंपरा को इस्लाम में भी पूर्णतया व्यवस्थित रूप दिया। उन्होंने हजरत मुहम्मद को पहला ऋषि माना "अबल ऋषि अहमद ऋषि " दूसरा हजरत उवैस को जो मुहम्मद के शिष्य थे। फिर उन्होंने "रूम ऋषि" जिन्हें काश्मीरी हिन्दू पुराण लोमष ऋषि कहते है का वर्णन किया। उन्होंने दंडक वन के जनकार ऋषि का भी उल्लेख किया है तथा पलास ऋषि और मीरान ऋषि का जिक्र किया। एक दन्त कथा के अनुसार नुंद के पिता सालार तेज को योस्मन ऋषि ने इस्लाम की दीक्षा दी। स्वयं को उन्होंने सातवां ऋषि माना।

उन्होंने इन ऋषियों की परंपरा में हिन्दू ऋषियों की भांति ही, संयम तथा इन्द्रिय निग्रह पर बल दिया। एक ऋषि के बारे में वे लिखते हैं।

दंडक वन के 'जुल्कार ऋषि' ने माया
कोथा अपने से कोसों दूर भगाया।
था अन्न ग्रहण का भी तो उसे न बंधन

{अनुवाद शशि शेखर }

उन्होंने ऋषि परंपरा को महान मान कर उससे अपने को जोड़ा परन्तु आगे चलकर उन्हें ऋषित्व में ह्रास आता प्रतीत हुआ। ऋषित्व की महानता आगे के ऋषि बनाये नहीं रख सके फिर भी कश्मीरी ऋषि परंपरा में 'नुंद ऋषि' सबसे महान थे।

कश्मीर में ऋषि संप्रदाय की अपार प्रतिष्ठा रही। हिन्दू और मुसलमान दोनों में नुंद ऋषि के प्रति व्यापक सम्मान का भाव रहा। नुंद ऋषि एक मात्र ऐसे ऋषि हैं जिनके नाम पर सिक्का ढला 1809 ई० में कश्मीर के अफगान गवर्नर ने जब अपने को स्वतंत्र घोषित कर दिया तब उसने शेख नूरुद्दीन के नाम का सिक्का ढाला। हालांकि उन सिक्कों पर 'नूरुद्दीन' या 'शेख नूरुद्दीन' के बजाय शाह नूरुद्दीन खुदा है जिससे कई विद्वान उस पर संदेह भी करते हैं।

तुलसी और कबीर की तरह शेख नूरुद्दीन को अपने समय के मुल्लाओं, आलिमो से विरोध भी सहना पड़ा। चूँकि उनकी अरबी– फारसी पर विशेष पकड़ नहीं थी अतः उन्हें 'अनपढ़' तक कह दिया गया पर उन्होंने भी मुल्लाओ की कट्टरता और आडम्बरों की जबरदस्त खिल्ली उड़ायी।–

मुल्लाओं की पगड़ी भी क्या शानदार है
कैसे चलते अकड़– अकड़कर इसको पहने।
पांव जरी की जूती डाले, तन पर चोगा
और कांख में खाने के तष्तरी पंसेरी
दुर्गम पर्वत लांघ कमाने जाओ रोजी ,
औ रोजी से मुल्लाओं को भोज खिलाओ।

इस तरह उन्होंने धर्म के कट्टरवादी स्वरुप के बजाय लोकप्रिय स्वरुप को ही आगे बढाना जारी रखा।

यही नहीं अपनी पूर्ववती प्रतिष्ठित कवियित्री और शिव साधिका लल्लेश्वरी से प्रभावित होने की अपनी स्थिति को भी उन्होंने पूरी ईमानदारी से प्रकट किया। वह उनसे इतना प्रभावित थे कि अपने एक पद में उन्होंने लल्लेश्वरी को अवतार तक घोषित किया है।

वह लल्लेश्वरी पदमपुर की, उसने तो
निश्चय ही में अमृत का घूँट पिया था
वह महायोगिनी तो अवतार अरे थी
हे देव, बनूँ मैं भी वैसा ही वर दो।

{अनूदित शशिशेखर तोषखानी }

उन्होंने इस्लाम का सच्चा अनुयायी होते हुए भी धर्म का वह स्वरुप ग्रहण किया जो हिन्दू मुसलमानों दोनों में लोकप्रिय हो। षैव धर्म की अवधारणाओं और प्रतीकों का उन्होंने खुलकर प्रयोग किया। शम्भुनाथ भट्ट हलीम द्वारा अनुदित उनके एक श्रुक के अनुसार।

शिव हर स्थल पर रहता है। सर्व– व्यापक है। यह मत समझकि यह हिन्दू और वह मुसलमान है।

यदि तू सयाना है तो अपने आप को पहचान। आत्म बोध प्राप्त कर, वही साहिब {परवर दिगारशिव} से तुम्हारी जानकारी है।

धर्मनिरपेक्षता का यह मूल मंत्र कश्मीर के मनीषी संतों ने तब प्रचारित किया था, जब देश के अन्य भागों में इस भावना का कहीं प्रादुर्भाव नहीं हुआ था। इस उद्घोष में नुंद ऋषि और लल्लेश्वरी एक हैं।

कश्मीर में हिन्दुओं और मुसलमानों के कई घराने 'ऋषि' नाम से प्रसिद्ध हैं। यह ऋषि परंपरा की लोकप्रियता का द्योतक है। अपने कई श्रुकों में ऋषि विशेषण को वह स्वयं निःसंकोच अपने से जोड़ते हैं ''यही कर रहा विनती 'नुंद ऋषि' आपसे''।